आसपास के परिवेश से शिक्षण
(मध्य प्रदेश शासन की नई पहल)

लक्ष्मी नारायण मित्तल*

प्रस्तुत लेख में 'पँच-प'-परिवार, परिवेश, परम्परा, पराक्रम, और पहचान के आधार पर स्कूली शिक्षा के महत्त्व को बताया गया है। शिक्षा का लक्ष्य 'आसपास से दूर अर्थात् परिचित से अपरिचित की ओर' की जानकारी व अनुभव उपलब्ध कराना होना चाहिए। प्रायः विश्व स्तरीय जानकारी कई माध्यमों से प्राप्त की जा सकती है, जिसका व्यक्ति के जीवन से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता और न ही व्यक्ति जीवन में उसका अधिक उपयोग कर पाता है। अतः शिक्षा को स्थानीय व निकटस्थ ज्ञान से जोड़ा जाना चाहिए जिसका विद्यार्थी से अधिक जुड़ाव होता है। स्थानीय परिवेश से शिक्षण देश, समाज को पुर्नस्थापित करने की अच्छी पहल है।

मध्य प्रदेश के लोकशिक्षा विभाग ने नये शिक्षा सत्र से 'पँच-प' के आधार पर स्कूली शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित किया है। 'पाँच-प' हैं—परिवार, परिवेश, परम्परा, पराक्रम, और पहचान। शासन की मंशा है कि स्वयं की जानकारी, परिवार और पड़ोस की जानकारी, पीढ़ी-दर-पीढ़ी की जानकारी, अपने गाँव, कस्बा, मोहल्ले की जानकारी, लोक-संस्कृति, लोक-पहचान और क्षेत्र के स्वतंत्रता सैनानियों, वीरों, पराक्रमियों की जानकारी बच्चों को होनी चाहिए।

गाँधी जी कहा करते थे—

'*आदमी साक्षरता से अथवा अपनी विद्धता से आदमी नहीं बनता, बल्कि सच्चे जीवन के लिए ली गई शिक्षा से बनता है।*'

(*हरिजन* 2 फरवरी 1947 पृ. 3)

उनका मानना था कि निरंतर शंका और शुद्ध जिज्ञासा किसी भी प्रकार के ज्ञानार्जन की पहली शर्ते हैं। आज हमारा बच्चा विश्व की महान हस्तियों के बारे में इंटरनेट से जानकारी प्राप्त करता है, परन्तु उसे स्थानीय इतिहास, स्थानीय

* एच-883, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, मुरैना (म.प्र) 47600.

भूगोल, अपने परिवार व परिवेश के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं होती।

आज व्यक्ति स्वतंत्र नहीं है, वह एक व्यापक समाज, समुदाय-सभ्यता का हिस्सा है। वह मानव-समाज के साथ तो क्रियाकलाप करता ही है, परन्तु वह तथाकथित जड़ प्रकृति के साथ भी अभिन्न रूप से जुडा हुआ है। प्रकृति में जड़ प्रकृति, वनस्पति, पशु-पक्षी इन विभिन्न उपांगों से उसका गहरा रिश्ता है। इतिहास क्या मात्र घटनाओं का लेखा-जोखा है? या उनका संबंध हमारे वर्तमान और भविष्य से भी है?

विगत की घटनाओं से न केवल हमारा भौतिक आचरण बल्कि आत्मिक, आध्यात्मिक और वैचारिक आचरण भी वर्तमान और भविष्य में प्रभावित होता है। हम अपने परिवेश से अपने अतीत और अपने वर्तमान को जोड़ सकते हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक गतिविधियों को गहराई से पड़ताल करने की आवश्यकता है। परिवेश से जो शिक्षण होता है, वह सजीव व रोचक होता है और उससे बच्चे की रचनात्मक क्षमता का विकास होता है।

बच्चा जब अपने बुजुर्ग से परिवार या वँश के संबंध में जानकारी जुटाता है, तो उसे अपने तथा कथित अशिक्षित (वास्तव में मात्र निरक्षर, अशिक्षित नहीं) बुजुर्ग के प्रति सम्मान का भाव बढ़ता है। इस प्रकार के शिक्षण में अपार संभावनाएँ हैं। इससे बच्चे में जिज्ञासा, प्रश्न पूछने, सिलसिलेवार सोचने, सूचना को विश्लेषित और वर्गीकृत करने की क्षमता बढ़ती है। इस प्रकार के शिक्षण में गणित, भाषा, इतिहास, भूगोल, चित्रकला सभी का सम्मिलन रहता हैं। वास्तव में मानव मस्तिष्क खण्डों में विभाजित नहीं है। इसीलिए विभिन्न विषय भी एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। आज कृषि में नयी-नयी उपलब्धियाँ हासिल की जा रही हैं। परन्तु पारम्परिक खेती व बीज उस जमाने की फसलों आदि के बारे में संकलित जानकारी स्थानीय उपयोग की होती है। नगदी फसलों को तब लोग जानते न थे। पौष्टिकता और मौसमानुसार पारम्परिक फसलों का लाभ शरीर व मन के लिए बहुत हितकर है।

इस प्रकार के शिक्षण से श्रम की गरिमा का आभास मिलता है। आज हम पुस्तकीय शिक्षा में श्रम के महत्त्व को भुला बैठे हैं। गाँधी जी कहते थे कि—

> *"सच्ची शिक्षा केवल हाथ, पैर, नेत्र, कान, नाक आदि शारीरिक अँगों के उचित व्यायाम व प्रशिक्षण से ही प्राप्त की जा सकती है।"*

गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा 'साहसी नागरिकता' के लिए बच्चों को तैयार करने का विधान था। यह परिवेश से शिक्षा इसी का एक लक्षण है—

> *"मनुष्य न केवल बुद्धि है, न निपट पाश्विक शरीर और न केवल हृदय और आत्मा। समग्र मानव इन तीनों के उचित और सामञ्जस्यपूर्ण योग से ही बनता है और शिक्षा की सच्ची योजना में इसी का समावेश होना चाहिए।"*
>
> (महात्मा गाँधी- *हरिजन* 8 मई, 1937 पृ. 104)

परिवेश के माध्यम से शिक्षा धन पर आधारित नहीं है। यह शिक्षा प्रणाली आयातित नहीं है और शुद्ध भारतीय मानस की उपज है। यह स्थानीयता से युक्त है और अपने परिवेश से आविष्ट है।

इसे कुछ मायनों में ग्राम-प्रधान भी कहा जा सकता है।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रस्तुत 'विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005' में भी ज्ञान प्राप्ति में बच्चे द्वारा निभायी जाने वाली भूमिका पर फिर से जोर दिया गया है और सामाजिक/सांस्कृतिक दर्शन में 'ज्ञान का सामाजिक निर्माण' एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत रहा है। ज्ञान का सामाजिक निर्माण अर्थात् अपने परिवेश की अन्तर्वस्तु के साथ सक्रिय जुड़ाव। यह मुक्त अधिगम पद्धति है। इसमें 'पहुँच और समता' है 'विविधता' और 'लचीलापन' है और यह बच्चे की 'आवश्यकता' और 'रुचि' के अनुकूल है। आज प्रचलित शिक्षा में पढ़ने-लिखने के बाद युवा अपने परिवेश से पूरी तरह कट जाता है। उसे लगता है कि जो कुछ उसका निजत्व स्वत्व है, वह 'पिछड़ा' है 'सामर्थ्यहीन' है और 'भदेस' है। इससे बच्चे में कुण्ठा और हीन भावना जागृत होती है। वह उस परायी जीवन पद्धति का अनुगामी होता है जो उसे कहीं नहीं पहुँचाती। वह एक अहंकार और झूठे अभिमान से भर जाता है। न तो उसे कोई ज्ञान प्राप्त होता है, न हुनर, न ही कोई दक्षता। इसके अलावा आधुनिक शिक्षा मात्र सूचनात्मक है। ऐसी सूचना का उसके देश काल से कोई संबंध नहीं है। यह स्थिति बच्चे के आत्मविश्वास को तोड़ देती है। वह ललचायी नजर से उस दुनियाँ को देखता है जो उसकी नहीं है, न उसकी हो सकती है (कुछ प्रतिशत को छोड़कर)।

हर समाज की अपनी जीवन दृष्टि होती है। वह समाज उसी जीवन दृष्टि से संचालित होता है। यह जीवन दृष्टि भी कुछ मान्यताओं को जन्म देती है। परन्तु यदि मान्यता मूल्यों पर आधारित होती है तो वे व्यवहारसंगत होती है और फिर स्वयं के अनुभव और मान्यता के बीच फाँक नहीं होती।

परिवेश से शिक्षण की पहल एक तो भारतीय है, फिर वह स्थानीय है, शोषणकारी विकास की अवधारणा पर आधारित नहीं है। आज आधुनिक शिक्षा के माध्यम से जिस 'राजनैतिक अपरिशुद्धता' (Political incorrectness) का भय पैदा किया जाता है, वह नहीं है। कुल मिलाकर देश समाज को पुर्नस्थापित करने के लिए परिवेश से शिक्षण एक अच्छी पहल है।